चार्ली

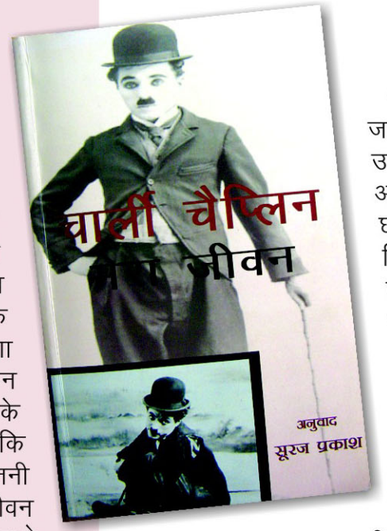

पुस्तक अंश

चार्ली चैप्लिन को दुनिया का महानतम फिल्मकार माना जाता है। एक ऐसा जीनियस जिसने हमेशा आम आदमी के लिए फिल्में बनाईं। हमेशा लोगों को हँसाया। लेकिन चार्ली की आत्मकथा पढ़ने के बाद तुम जान सकते हो कि उनकी इस हँसी के पीछे कितनी तकलीफें थीं। उनका पूरा जीवन उतार-चढ़ावों से भरा रहा। जब वे बारह वर्ष के ही थे तो उनके पिता की मृत्यु हो गई थी। माँ के पागल हो जाने और कोई स्थायी आधार ना होने के कारण चार्ली को पूरा बचपन अभावों में गुज़ारना पड़ा और यतीमखानों में रहना पड़ा।

लेकिन तमाम तकलीफों के बावजूद चार्ली ने अपना हौसला नहीं खोया। उनकी आत्मकथा सारे दुख और परेशानियों के बावजूद एक करुण कथा नहीं है। यह एक सफलता की महागाथा है। दुनिया के सबसे चहेते कलाकार की गाथा। *मेरा जीवन* शीर्षक से प्रकाशित इस आत्मकथा का हिन्दी अनुवाद सूरज प्रकाश ने किया है। इसे आधार प्रकाशन, पंचकुला, हरियाणा ने प्रकाशित किया है।

हम यहाँ चार्ली के जीवन का वो प्रसंग प्रस्तुत कर रहे हैं जब चार्ली पहली बार मंच पर आए थे। उस वक्त उनकी उम्र तकरीबन पाँच साल की रही होगी। चार्ली के भीतर छिपी हास्य प्रतिभा भी यहीं जगज़ाहिर हो जाती है। जैसा चार्ली के एक मित्र और लेखक फ्रैंक हैरीज ने चार्ली के बारे में कहा था, "लोगों को हँसाने वाले व्यक्ति लोगों को रुलाने वाले व्यक्ति से श्रेष्ठ होते हैं।"

• *मिहिर*

यह उसकी (माँ की) आवाज़ खराब होते चले जाने के कारण ही था कि मुझे पाँच बरस की उमर में पहली बार स्टेज पर उतरना पड़ा। माँ आमतौर पर मुझे किराए के कमरे में अकेला छोड़कर जाने की बजाय रात को अपने साथ थियेटर ले जाना पसन्द करती थी। वह उस वक्त "कैंटीन एट द एल्डरशॉट" में काम कर रही थी। ये एक गन्दा, चलताउ-सा थियेटर था जो ज़्यादातर फौजियों के लिए खेल दिखाता था। वे उजड्ड किस्म के लोग होते थे और उन्हें भड़काने या ओछी हरकतों पर उतर आने के लिए मामूली-सा कारण काफी होता था। एल्डरशॉट में नाटकों में काम करने वालों के लिए वहाँ एक हफ्ता गुज़ारना भी भयंकर तनाव से गुज़रना होता था।

मुझे याद है मैं उस वक्त विंग्स में खड़ा हुआ था। जब पहले तो माँ की आवाज़ फटी और फिर फुसफुसाहट में बदल गई। श्रोताओं ने ठहाके लगाना शुरू कर दिए। और अनापशनाप गाने लगे। और कुत्ते-बिल्लियों की तरह आवाज़ें निकालना शुरू कर दिया। सब कुछ अस्पष्ट-सा था। मैं ठीक से समझ नहीं पा रहा था कि यह सब क्या चल रहा है। लेकिन शोर-शराबा बढ़ता ही चला गया। और मजबूरन माँ को स्टेज छोड़ कर आना पड़ा। जब वह विंग्स में आई तो बुरी तरह से दुखी थी। और स्टेज मैनेजर से बहस कर रही थी। स्टेज मैनेजर ने मुझे माँ की सखियों के आगे अभिनय करते देखा था। वह माँ से शायद यह कह रहा था कि उसके स्थान पर वह मुझे स्टेज पर भेज दे।

और इसी हड़बड़ाहट में मुझे याद है कि उसने मुझे एक हाथ से थामा था और स्टेज पर ले गया था। उसने मेरे परिचय में दो-चार शब्द बोले और मुझे स्टेज पर अकेला छोड़कर चला गया। और वहाँ फुट-लाइटों की चकाचौंध और धुएं के पीछे हँसते चेहरों के सामने मैंने गाना शुरू कर दिया। ऑर्केस्ट्रा मेरा साथ दे रहा था। थोड़ी देर तक तो वे भी गड़बड़ बजाते रहे। आखिर में उन्होंने मेरी धुन पकड़ ही ली। यह उन दिनों का एक मशहूर गाना "जैक जॉन्स" था:

जैक जॉन्स सबका परिचित और देखा-भाला

घूमता रहता बाज़ार में गड़बड़झाला...

अभी मैंने आधा ही गीत गाया था कि स्टेज पर सिक्कों की बरसात होने लगी। मैंने तत्काल घोषणा कर दी कि मैं पहले पैसे बटोरूँगा और उसके बाद ही गाना गाऊँगा। इस बात पर और अधिक ठहाके लगे। स्टेज मैनेजर एक रुमाल लेकर स्टेज पर आया। और सिक्के बटोरने में मेरी मदद करने लगा। मुझे लगा कि वह सिक्के अपने पास रखना चाहता है। मैंने यह बात दर्शकों तक पहुँचा दी। तो ठहाकों का जो दौरा पड़ा वह थमने का नाम ही न ले। खासतौर पर तब जब वह रुमाल लिए-लिए विंग्स में जाने लगा। और मैं चिन्तातुर उसके पीछे-पीछे लपका। जब तक उसने सिक्कों की वह पोटली मेरी माँ को नहीं थमा दी, मैं स्टेज पर वापिस गाने के लिए नहीं आया। अब मैं बिल्कुल सहज था। मैं दर्शकों से बातें करता रहा। मैं नाचा और मैंने तरह-तरह की नकल करके दिखाई। मैंने माँ के आइरिश मार्च थीम की भी नकल करके बताई।

रिले रिले

बच्चे को बहकाते रिले

रिले रिले मैं वो बच्चा

जिसे बहकाते रिले...

और कोरस को दोहराते हुए मैं` अपने भोलेपन में माँ की आवाज़ के फटने की भी नकल कर बैठा। मैं यह देखकर हैरान था कि दर्शकों का इस पर ज़बर्दस्त असर पड़ा है। खूब हँसी के पटाखे छूट रहे थे। लोग खूब खुश थे। और उसके बाद फिर सिक्कों की बौछार!

और जब माँ मुझे स्टेज से लिवाने के लिए आई तो उनकी मौजूदगी पर उन्होंने जम कर तालियाँ बजाईं। उस रात मैं अपनी ज़िन्दगी में पहली बार स्टेज पर उतरा था। और माँ .... आखिरी बार!

जब नियति आदमी के साथ खिलवाड़ करती है तो उसके ध्यान में न तो दया होती है और न ही न्याय। माँ के साथ भी नियति ने ऐसे ही खेल खेले। उसे उसकी आवाज़ फिर कभी वापिस, नहीं मिली। जब पतझड़ के बाद सर्दियाँ आईं तो हमारी हालत बद से बदतर हो गई। हालाँकि माँ बहुत सावधान थी। और उसने थोड़े-बहुत पैसे बचाकर रखे थे। लेकिन कुछ ही दिनों में यह पूँजी भी खत्म हो गई। धीरे-धीरे उसके गहने और छोटी-मोटी चीज़ें बाहर का रास्ता देखने लगीं। ये चीज़ें घर चलाने के लिए गिरवी रखी जा रही थीं। और इस पूरे अरसे के दौरान वह उम्मीद करती रही कि उसकी आवाज़ वापिस लौट आएगी। इस बीच हम तीन कमरों के मकान से दो कमरों के मकान और फिर

मकान और फिर एक कमरे के मकान में शिफ्ट हो चुके थे। हमारा सामान कम होता चला जा रहा था। और हम हर बार जिस तरह के पड़ोस में रहने जाते उसका स्तर नीचे आता जा रहा था।

चित्रः इंटरनेट से साभार